इकाई 9 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

पहले की इकाई के अध्ययन के बाद आप जान गए हैं कि किस प्रकार 19वीं सदी में भारत में आधुनिक विचारों की उत्पत्ति एवं प्रसार ने बौद्धिक जागरण में योगदान दिया। इस जागरण का मुख्य परिणाम था भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन। कांग्रेस ने आधुनिक भारत के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस इकाई में इस बात की चर्चा की गई है कि इसके गठन की पृष्ठभूमि क्या थी और कौन से कारण थे जिनसे इसकी स्थापना हुई। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- ज्ञान पायेंगे कि किस वातावरण में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई थी।
- यह जान सकेंगे कि शिक्षित भारतीयों ने इसके गठन में क्या भूमिका निभायी।
- कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे तथा
- इसके गठन से संबंधित विवादों से परिचित हो पायेंगे।

9.1 प्रस्तावना

सोमवार, 28 दिसंबर 1885 को बंबई के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय के सभा भवन में 72 व्यक्तियों की एक बैठक हुई। वे लोग भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उद्घाटन सत्र में भाग ले रहे थे। उस दिन से इस संस्था ने ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए भारतीय

संघर्ष में अहम् भूमिका निभायी।

आपको पहले बताया जा चुका है कि किस तरह से भारत में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना हुई और भारत में राष्ट्रीय जागरण के उत्थान और विकास के क्या कारण थे। इस इकाई के द्वारा आप पहले पढ़ी गई इकाई से आगे की जानकारी प्राप्त करेंगे। इसमें इस बात की चर्चा भी की गई है कि भारत में फैले राष्ट्रीय जागरण के फलस्वरूप किस प्रकार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का राजनैतिक संगठन के रूप में गठन हुआ।

9.2 वातावरण

जैसे-जैसे भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का प्रसार होता गया, आम लोगों के बीच असंतोष की भावना बढ़ती चली गयी। यह भावना इस बात पर आधारित थी कि नयें शासकों की वजह से ही उन्हें आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। उन्होंने यह भी महसूस किया कि उन्हें अपने ही देश में हीन भावना से देखा जा रहा है और उनकी संस्कृति पर भी हमला हो रहा है। उनकी प्रगति के लिये उपलब्ध अवसर भी अधिक नहीं थे। सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों ने छुट-पुट विद्रोह के जरिए अपना आक्रोश व्यक्त किया। यह बगावत मुख्य रूप से जमींदारों, सूदखोरों और टैक्स जमाकर्त्ताओं के विरूद्ध थी। लेकिन मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि ये विरोध अंग्रेजों द्वारा बनाई गई व्यवस्था के खिलाफ थे। इन बगावतों के जरिए विदेशी शासन के खिलाफ असंतोष की तीव्रता स्पष्ट हो गयी। देश के विभिन्न भागों में फैल जाने वाला 1857 का महान् विद्रोह जनता में व्याप्त असंतोष का ही परिणाम था।

9.2.1 नए नेतागण

विद्रोह की असफलता ने यह स्पष्ट कर दिया था कि विरोध की पारंपरिक विधि सक्षम नहीं थी। इसके द्वारा यह भी देखने को मिला कि पुराने कुलीन वर्ग भारतीय समाज के संरक्षक नहीं हो सकते। अंग्रेजी शिक्षित मध्य वर्ग ही भविष्य की आशा के रूप में दिखाई दिया। इस वर्ग के द्वारा चलाया गया आंदोलन का स्वरूप पूरी तरह से भिन्न था। इकाई 3 में दिए विवरण द्वारा आप जान सकते हैं कि यह वर्ग इस बात से अवगत था कि अंग्रेजों के संपर्क से भारत को क्या-क्या लाभ प्राप्त हुए। यह यूरोपीय उदारवादी अवधारणाओं से भी पूरी तरह परिचित था। इसके साथ ही इन्हें देश के गौरवशाली इतिहास पर भी गर्व था और धीरे-धीरे यह अवधारणा विकसित होने लगी कि विदेशी प्रभुत्व भारतीय जनता की आशाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति में बाधक था। भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों में निवास कर रहे लोगों में स्वत्व का ज्ञान बढ़ने लगा था। शिक्षित भारतीयों को कुछ समय के लिए यह विश्वास होने लगा कि अगर परोपकारी शासक अपना ध्यान उनकी ओर दें तो उनकी समस्याओं का समाधान हो जायेगा। इसलिए, मध्य वर्ग का आंदोलन शुरू में सिर्फ कुछ विशिष्ठ राजनैतिक और आर्थिक मुद्दों तक ही सीमित था। हालाँकि यह रास्ता कुछ समय बाद छोड़ दिया गया।

9.2.2 कला एवं साहित्य

इस अवधि में राष्ट्रीयता और देश भक्ति के आदर्शों को गीतों, कविताओं एवं नाटकों के माध्यम से लोकप्रिय स्वरूप दिया गया। बहुत सारे गीतों को हिंदू मेले के लिए रचा गया जिनका आयोजन 1867 के कुछ सालों बाद तक बंगाली नेताओं के एक समूह द्वारा होता था। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय आदर्शों को फैलाना और स्वदेशी कला एवं शिल्पों को बढ़ावा देना था। इस क्रम में ब्रिटिश नीतियों को लोगों की आर्थिक विपन्नता के लिए जिम्मेवार ठहराया गया। स्वदेशी वस्तुओं के इस्तेमाल करने पर जोर डाला गया। इन विचारों को नाटकों के माध्यम से भी प्रदर्शित किया गया। 1860 के आसपास "नील दर्पण" नाम का नाटक जो काफी लोकप्रिय हुआ,जिसमें कि नील की खेती करने वालों पर बागान मालिकों

द्वारा हो रहे अत्याचारों को उभारा गया था। (इकाई 7 उपभाग 7.5.1 देखें) इस संदर्भ में बंकिम चंद्र चटर्जी का नाम काफी महत्वपूर्ण है जिन्होंने कई ऐतिहासिक नाटकों की रचना की जिसमें शासकों की निरंकुशता का विशेष रूप से उल्लेख है। उनका सबसे लोकप्रिय कार्य "आनन्दमठ" (1882) है, जिसमें उनका अविस्मरणीय गीत "बंदेमातरम्" भी है जो कि कुछ ही अर्से पहले (1875) रचा गया था। इसी तरह के राष्ट्रीय भावनाओं से भरे साहित्य, अन्य भाषाओं में भी पाए जा सकते हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने जो कि आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता माने जाते हैं, अपने नाटकों, कविताओं और पत्रिकाओं से स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग करने का आग्रह किया। ऐसी ही प्रवृत्ति मराठी साहित्य में भी देखी जा सकती है जहाँ कि प्रकाशनों की संख्या काफी बढ़ी – 1818-1827 में मात्र तीन से बढ़कर 1885-1896 के बीच 3,284 हो गयी।

9.2.3 अखबार एवं पत्रिकाएँ

अखबारों एवं पत्रिकाओं ने भारतीय राष्ट्रीय हित में तथा औपनिवेशिक शासन की ज्यादतियों और असमानताओं के विरोध में लोकमत बनाने में एक विश्वसनीय भूमिका अदा की। इस अवधि के कुछ जाने माने अंग्रेजी भाषा के अखबार अमृत बाजार पत्रिका, हिन्दु पैट्रियाट और सोम प्रकाश थे जिनका प्रकाशन कलकत्ता में होता था। इन्दु प्रकाश और नेटिव औपिनियन बंबई से तथा हिन्दु का प्रकाशन मद्रास से होता था। हिन्दी भाषा में प्रकाशित होने वाले कुछ महत्वपूर्ण अखबार, हिन्दुस्तान, भारत मित्र और जगत मित्र थे। उर्दू भाषा के जाने माने अखबार, जामे-जहाँनुमा और खुशदिल अखबार थे।

उस समय के ब्रिटिश पर्यवेक्षकों को राजनैतिक जागरूकता एवं एकता की भावना के चिह्न स्पष्ट रूप से दिखने लगे थे। उदाहरण के लिए, 1878 में **डबलू.बी.जौन्स**, बेरार के तत्कालीन कमीश्नर ने भारत सरकार को गोपनीय रिपोर्ट में लिखा कि "20 वर्षों के मेरे अनुभव से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीयता की भावना पूर्ण रूप से जागृत हो गयी है जिसका कि पहले कहीं अस्तित्व नहीं था अथवा धुंधले रूप से महसूस किया गया था – अब हम लोगों को मात्र सूबों के लोगों से ही नहीं बल्कि 20 करोड़ लोगों की एकता, जो कि सहानुभूति एवं परस्पर व्यवहार पर आधारित है, तथा जिसे कि हम लोगों ने ही पैदा किया है, का सामना करना पड़ रहा है। यहां मुझे ऐसा लगता है कि इन दिनों का सबसे बड़ा राजनैतिक सच है।"

बोध प्रश्न 1

1 अभी जो आपने उद्धरण पढ़ा, उसमें किन बातों को उन दिनों का राजनैतिक सच कहा गया है?

....

....

....

....

....

....

2 अखबारों के नामों को उनके प्रकाशन के स्थानों से व्यवस्थित करे

i) हिन्दू पैट्रिऑट	बंबई
ii) नैटिव औपिनियन	मद्रास
iii) हिंदू	कलकत्ता

3 नीचे लिखे वक्तव्यों को पढ़ें और सही (✓) अथवा गलत (×) का चिन्ह लगाएँ।

i) 1857 के विद्रोह से यह प्रदर्शित हो गया कि विरोध के पारंपरिक तरीके सफल हो सकते हैं।

ii) इस अवधि में राष्ट्रीयता की भावनाओं को गीतों, कविताओं और नाटकों की सहायता से लोकप्रिय बनाया गया।

iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने स्वदेशी चीजों के इस्तेमाल के लिए आग्रह किया।

iv) इस अवधि में अखबारों तथा पत्रिकाओं ने साम्राज्यवादी भावनाओं को फैलाने में मदद दी।

9.3 1885 के पूर्व की राजनैतिक संस्थायें

भारत में स्थापित होने वाली संस्थाओं में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पहली नहीं थी। कई संस्थायें पहले भी स्थापित की गई थीं। भारत में संगठित रूप से राजनैतिक गतिविधियों की शुरूआत 1837 में "लैण्डहोल्डर्स" नाम की संस्था की स्थापना से होती है। यह संस्था बंगाल, बिहार और उड़ीसा के जमींदारों की थी और इसके मुख्य उद्देश्य उनके वर्ग के हितों की रक्षा थी। 1843 में बंगाल "ब्रिटिश इंडिया" नाम की एक और संस्था का प्रादुर्भाव हुआ। इसके उद्देश्य व्यापक थे जैसे कि आम जनता के हितों की रक्षा करना तथा उन्हें बढ़ावा देना। लैण्डहोल्डर्स संस्था धन के अभिजात तंत्र का प्रतिनिधित्व करती थी जबकि दूसरी ओर बंगाल ब्रिटिश इंडिया सोसायटी बुद्धि के अभिजात तंत्र का प्रतिनिधित्व करती थी। 1851 ई. में दोनों संस्थाओं का विलय हो गया जिससे कि नई ब्रिटिश इंडिया नाम की संस्था का जन्म हुआ। इसी समय ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकार पत्र का नवीकरण भी होना था और इस बात की जरूरत महसूस की गयी कि लंदन के शासकों को संस्था के विचारों से अवगत कराया जाये। इसी समय बंबई तथा मद्रास में भी संस्थायें बनाई गयीं। इन संस्थाओं का नाम क्रमशः बंबई एसोसियेशन तथा मद्रास नेटिव एसोसिएशन रखा गया तथा इनकी स्थापना 1852 में हुई। इन सभी संस्थाओं पर धनी जमींदारों का प्रभुत्व था। इसी तरह की संस्थायें भारत के अन्य भागों में भी बनीं पर वे उतनी जानी मानी नहीं थीं। उनमें से एक देक्कन एसोसियेशन नाम की संस्था थी।

तीनों प्रेसीडेंसी संस्थाओं ने ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकार पत्र में परिवर्तन के लिए सुझाव भेजे। ये सुझाव हमें उस समय की जनता के प्रति जागरूक वर्गों की मनोवृत्ति का अच्छा खासा आभास देते हैं। आवेदक यह चाहते थे कि भारतीयों को व्यावस्थापिका निकायों में नियुक्त किया जाये, नमक और नील पर कंपनी के एकाधिकर को समाप्त किया जाये और सरकार स्वदेशी उद्योगों को सहायता दे। इस बात की भी चर्चा की गयी थी कि स्थानीय सरकारों के पास अधिक शक्ति होनी चाहिए तथा भारतीयों को अपने देश के प्रशासन में बड़ी हिस्सेदारी मिले। जहाँ तक खेती से संबंधित मसलों के प्रश्न थे इस बात की इच्छा जाहिर की गयी कि उनके जमीन के तत्कालीन हितों को सुरक्षित रखा जाये। प्रत्येक अर्जी में कृषकों की स्थिति में सुधार की चर्चा की गयी थी। ब्रिटिश इंडिया एसोसियेशन के सदस्यों द्वारा भेजी गयी अर्जी में यह कहा गया था कि जबकि भारतीय इस उन्नत सरकार के अभिमन्त्रण को स्वीकार करते हैं पर वह इस बात को भी महसूस करते हैं कि जहाँ तक उनको ग्रेट ब्रिटेन के संपर्क से फायदा हो सकता था जो कि उनका अधिकार था, उतना फायदा नहीं हुआ। उनकी बहुत सारी माँगों को बाद में चलकर कांग्रेस ने अपने जिम्मे ले लिया।

जैसी की पहले चर्चा की जा चुकी है, 1860 और 1870 के दशकों में राष्ट्रीयता और देशभक्ति की भावनायें फैल गयी थीं। इस अवधि में देश के विभिन्न भागों में कई

राजनैतिक संस्थाओं की स्थापना की गयी जिनका कार्य प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में सुधार तथा लोगों के बीच राजनैतिक चेतना जगाना था। इन संस्थाओं में पूना सार्वजनिक सभा सबसे महत्वपूर्ण थी जिसकी स्थापना एम.जी. रानाडे, जी.पी. जोशी, एस.एच. चिपलांकर और उनके सहयोगियों ने 1870 में की थी। इस संस्था ने 1878 में एक पत्रिका निकाली जिसने राजनैतिक चेतना जगाने में काफी बड़ा योगदान दिया। इंगलैंड में राजनैतिक प्रचार करने के लिए कुछ भारतीय छात्रों जैसे फिरोजशाह मेहता, बदरूद्दीन तैयबजी, दादाभाईनारोजी और मनमोहन घोष ने ईस्ट इंडिया एसोसियेशन नाम की संस्था दिसंबर 1866 में स्थापित की।

1837 में लैण्डहोल्डर्स सोसाइटी की स्थापना के बाद के 50 वर्षों की अवधि मुख्य रूप से आकांक्षाओं की थी उपलब्धियों की नहीं। लेकिन इस अवधि के दौरान एक राष्ट्रीय स्तर के संगठन के विकास का ढाँचा तैयार हो गया था। एक राष्ट्रीय मंच की जरूरत आवश्यक रूप से महसूस की गयी। कलकत्ता में ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन के प्रति उदासीनता काफी बढ़ रही थी। इसकी सदस्यता शुल्क 50 रु. प्रति वर्ष था जो कि मध्य वर्ग के लिए बहुत अधिक था। (लॉर्ड कर्जन के अनुमान से 1898 में ब्रिटिश भारत में प्रति व्यक्ति आय दर 30 रु. प्रति वर्ष थी) इसलिए इसकी सदस्यता सिर्फ धनी वर्ग तक ही सीमित रह गयी थी। 1876 में कलकत्ता में इंडियन एसोसियेशन की स्थापना की गयी। इसका सदस्यता शुल्क 5 रु. प्रति वर्ष था। यह शीघ्र ही शिक्षित लोगों के बीच लोकप्रिय हो गयी और बंगाल में तथा बाद में चलकर भारत की राजनीति में एक बहुत ही बड़ी ताकत बन गयी। मध्य वर्ग के एक नौजवान सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जिन्हें कि अपर्याप्त कारणों पर भारतीय सिविल सेना से निकाल दिया गया था, इसकी स्थापना के लिए मुख्य रूप से जिम्मेवार थे। इंडियन एसोसियेशन के उद्देश्य थे एक ताकतवर जनमत का विकास, हिन्दु-मुस्लिम जनसंपर्क की स्थापना तथा भारतीय लोगों के बीच व्यापक जागरण पैदा करना। सभी तत्व राष्ट्रीय आंदोलन के अवयव थे। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने कहा कि नई एसोसियेशन संयुक्त भारत की अवधारणा पर आधारित थी जिसका प्रेरणा स्रोत मैजिनी-इटली एकीकरण के मुख्य निर्माता थे।

कई अन्य राजनैतिक संगठनों की स्थापना भारत के अन्य भागों में की गयीं जैसे कि मद्रास महाजन सभा, बंबई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन, इलाहाबाद पीपुल्स एसोसियेशन, लाहौर की इंडियन एशोसियेशन इत्यादि। इन सभी निकायों की शाखायें छोटे शहरों में भी थी। 1885 के बाद ये सारी कांग्रेस की क्षेत्रीय इकाइयाँ हो गयीं।

9.4 सरकारी प्रतिक्रिया

वस्तुतः शिक्षित भारतीयों की ये सभी गतिविधियाँ व्यर्थ नहीं गई। ब्रिटिश सरकार ने बढ़ते हुए राजनैतिक असंतोष को गंभीरता से लिया और शीघ्र ही आक्रामक रवैया अपनाया। इसकी एक झलक लार्ड लिटन जो 1876 में भारत आए, की नीतियों में मिलती है।

9.4.1 लिटन

लिटन ने खुले रूप से प्रतिक्रियावादी और भारत विरोधी नीतियाँ अपनानी शुरू की। यह इंडियन एसोसिएशन के लिए सुनहरा अवसर था और इसने अखिल भारतीय स्तर पर कई राजनैतिक आंदोलन आयोजित किए। लिटन ने भारतीय राजस्व पर अफगानिस्तान के लिए एक खर्चीला अभियान भेजा। उसने ब्रिटिश कपड़ा उद्योग के लाभ के लिए सूती कपड़ों पर से आयात कर हटा दिए जिससे नवजात भारतीय टेक्सटाइल उद्योग की हानि हुई। इन कदमों पर राजनैतिक रूप से जागृत भारतीयों ने अपनी अप्रसन्नता जाहिर की। आंतरिक नीतियों के तहत वाइसराय ने शाही राजकुमारों और जमींदारों को जो कि ब्रिटिश शासन के महत्वपूर्ण स्तम्भ थे संरक्षण दिया। वह शिक्षित भारतीयों की अभिलाषाओं को घृणा की दृष्टि से देखता था। इस अवधि में भारतीय सिविल सेवा परीक्षा में शामिल होने की उम्र सीमा 21 वर्ष से हटाकर 19 वर्ष कर दी गयी। चूँकि परीक्षा लंदन में आयोजित होती थी, इसलिए भारतीयों के लिए इस परीक्षा में शामिल होना कष्टपूर्ण था। उम्र की सीमा घटा देने से भारतीयों को इस परीक्षा में शामिल न होने देने के एक नियोजित तरीके का पता चल गया। इंडियन एसोसियेशन ने इस मुद्दे को उठाया और सारे देश में आंदोलन शुरू कर दिया। सुरेन्द्रनाथ ने स्वयं ही 1877-78 में देश के विभिन्न भागों का दौरा किया और भारतीय स्तर पर लोकप्रियता हासिल की। एसोसियेशन ने एक जाने माने बंगाली बैरिस्टर लाल मोहन घोष को एक ज्ञापन प्रस्तुत करने के लिए इंगलैंड भेजा।

वर्नाकुलर प्रेस एक्ट और आर्म्स एक्ट के लागू होने के विरोध में जन सभाएँ आयोजित की गयीं। पहले की तरह भारतीय भाषाओं में प्रकाशित होने वाले अखबारों और पत्रिकाओं पर

प्रतिबंध लगा दिए गए। भारतीय समाज में इस बात पर जोरदार रोष पैदा हो गया। अमृत बाजार पत्रिका जो कि उस वक्त तक बंगाली भाषा में प्रकाशित होता था रातों-रात इस एक्ट के प्रतिबंध से बचने के लिए अंग्रेजी माध्यम में प्रकाशित होने लगा। आर्म्स एक्ट के तहत भारतीयों को शस्त्र रखने के लिए लाइसेंस शुल्क अदा करने को कहा गया, जबकि यूरोपीयन लोगों को इससे मुक्त रखा गया। जमींदारों को विशेष रियायतें दी गई। आंदोलन के दौरान इन मुद्दों पर जिले के शहरों में काफी बड़ी जनसभाएँ आयोजित की गई जिसमें कई जगहों पर दस से बीस हजार के करीब लोग सम्मिलित हुए।

9.4.2 रिपन

1880 में लार्ड लिट्न के हटने के बाद लार्ड रिपन आए। रिपन की नीति बिल्कुल भिन्न थी। उनका मत था कि शिक्षित भारतीयों का उनकी शिक्षा और ब्रिटिश संसद के द्वारा समय-समय पर दी शपथ को ध्यान में रखते हुए उनके द्वारा धारण किए जायज प्रेरणाओं का आदर करना चाहिए। उनका कहना था कि लिट्न के शासन ने सही अथवा गलत रूप से यह भावना भारतीयों में पैदा कर दी थी कि इंगलैंड के हित में उनके सारे हितों की कुर्बानी दी जायेगी। वे शिक्षित वर्ग की बुद्धिमत्ता ब्रिटिश शासन को मजबूत करने में लगाना चाहते थे। उन्होंने वर्नाकुलर प्रेस एक्ट को निरस्त कर दिया और स्थानीय स्वशासी संस्थाओं तथा शिक्षा के प्रचार को बढ़ावा दिया तथा अफगान युद्ध को समाप्त कर दिया। उनकी नीतियाँ हालाँकि एक सीमा से ज्यादा नहीं बढ़ सकीं क्योंकि भारत में ब्रिटिश शासन के स्वरूप ने कई व्यवधान लागू किए थे।

ऐंग्लो इंडियन्स ने जो रिपन से रूष्ट थे, एक जबरदस्त आंदोलन उनके और उनकी भारतीय समर्थक नीतियों के विरूद्ध, इलबर्ट बिल के मुद्दे पर छेड़ दिया। दण्डविधि संशोधन बिल अथवा इलबर्ट बिल जो कि वाइसराय काउंसिल के ला सदस्य के नाम पर रखा गया था ने बंगाल प्रेसीडेंसी के सभी मुकदमों में भारतीय जजों के अधिकारों को यूरोपीय जजों के अधिकारों के समान बना दिया। इसका उद्देश्य यह था कि योग्य भारतीय मुफस्सिल तहसीलों में यूरोपीय लोगों द्वारा किए अपराधों की सुनवाई कर सकें। (प्रेसीडेंसी शहरों में इन्हें पहले ही ये अधिकार मिल चुके थे) यह बिल इसलिए लाया गया था क्योंकि न्यायिक सेवा में भारतीयों की संख्या बढ़ रही थी। इसमें इस बात की संभावना बढ़ गयी कि भारतीय न्यायाधीश बिना ज्यूरी के सभी अपराधी यूरोपीयों के केस की सुनवाई कर सकें। यूरोपीयों को असंतुष्टि की स्थिति में उच्च न्यायालय में अपील के अधिकार दिये गये। इस बात पर ऐंग्लों इंडियन्स के बीच जोरदार रोष भड़क उठा। रिपन ने देखा कि सिविल सेवा के अधिकारी भी विरोधियों से सहानुभूति रखते थे। अखबारों और जनसभाओं में भारतीय चरित्र और संस्कृति की तीव्र आलोचना हुई। अंततः सरकार को विरोध मत के सामने झुकना पड़ा और बिल का संशोधन इस तरीके से किया गया कि इसका मुख्य उद्देश्य ही समाप्त हो गया।

सारा विवाद, उस समय की स्थिति में जबकि अखिल भारतीय स्तर पर एक संगठन का विकास हो रहा था, महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह अक्सर कहा जाता है कि भारतीयों ने राजनैतिक आंदोलन का पहला सबक इस अवसर पर ऐंग्लो इंडियन्स से सीखा। यह वास्तव में सच बात नहीं है। भारतीयों ने पहले ही इस तरीके के महत्व को महसूस किया था और सिविल सेवा परीक्षा के प्रश्न पर अखिल भारतीय स्तर पर आंदोलन भी आयोजित किया था। दरअसल वे अपने अनुभव से जान गए थे कि ऐंग्लो इंडियन कभी भी उनके अधिकारों और बेहतर सुविधाओं की माँगों में साथ नहीं दे सकते थे। सारे देश में बिल विरोधी आंदोलन के मुद्दे पर भारतीयों की प्रतिक्रिया समान ही थी। भारतीय प्रेस ने यह स्पष्ट कर दिया कि शिक्षित भारतीय जनता बिल के मूल सिद्धांतों का आदर करती हैं और इसके परित्याग करने पर तीव्र विरोध करेगी। जब बिल के मूल सिद्धान्तों का त्याग कर दिया गया तो भारतीय प्रेस ने राष्ट्रीय एकता, आत्मनिर्भरता और शक्तिशाली संगठन की तत्कालीन आवश्यकता पर चर्चा शुरू कर दी थी।

1880 के दशक के प्रारंभ में एक राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता का मुद्दा भारतीय प्रेस के लिए एक महत्वपूर्ण विषय बन गया था। इलबर्ट बिल विवाद ने इस आवश्यकता को

और भी आवश्यक बना दिया। जुलाई 1883 में इंडियन एसोसिएशन ने एक सभा आयोजित की जिसमें करीब 10,000 लोगों ने भाग लिया। इस सभा में यह तय किया गया कि एक राष्ट्रीय कोष की स्थापना इस उद्देश्य से की जाये कि भारत और इंगलैंड में आंदोलनों के जरिए देश का राजनैतिक विकास किया जा सके। इस प्रस्ताव का हर जगह स्वागत किया गया। हालाँकि कुछ क्षेत्रों में इसकी निंदा इस आधार पर की गयी कि इंडियन एसोसिएशन, देश के अन्य राजनैतिक संगठनों का सहयोग पाने में असफल रही थी। राष्ट्रीय कोष में मात्र 20,000 रुपए ही संग्रहित किए जा सके। लेकिन प्रेस में इस बात पर व्यापक रूप से चर्चा हुई। चर्चा के क्रम में संयुक्त राजनैतिक कदम की आवश्यकता पर बार-बार बल दिया गया और कहा गया कि विभिन्न राजनैतिक संगठनों के प्रतिनिधियों को देश के बड़े शहरों में वर्ष में एक बार मिलना चाहिए। दिसंबर 1883 में एक अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी का आयोजन कलकत्ता में होने वाला था। इंडियन एसोसिएशन ने इस अवसर का लाभ उठाने का निश्चय किया और देश के विभिन्न भागों के प्रमुख लोगों और संगठनों को मिलने का निमंत्रण दिया और सार्वजनिक हित के प्रश्नों पर विचार करने को कहा। यह सम्मेलन 28 से 31 दिसंबर तक चला और इसे राष्ट्रीय सम्मेलन कहा गया। इस सम्मेलन में न तो काई विशेष प्रतिनिधि आए और न ही यह प्रभावशाली था। लेकिन यह एक महत्वपूर्ण बात है कि इसमें तय किए गए कार्यक्रम आगे चलकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा अपनाए कार्यक्रमों के समान थे। इसने 45 विभिन्न क्षेत्रों से आए शिक्षित भारतीयों को एक जगह बैठकर विचार-विमर्श करने का सुनहरा अवसर प्रदान किया। यह ठीक ही कहा गया है कि यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का पूर्वगामी था।

बोध प्रश्न 2

1 लॉर्ड लिटन के द्वारा उठाए उन पाँच कदमों की एक सूची बनाएँ जिन्होंने भारतीयों में आक्रोश पैदा किया।

....

....

....

....

....

2 नीचे दिए कौन से वक्तव्य सही (✓) अथवा गलत (×) हैं।

i लॉर्ड रिपन ने लिटन से विभिन्न रास्ता अपनाया।

ii इल्बर्ट बिल को एंग्लों इंडियन्स का पूर्ण समर्थन था।

iii यह बात सच है कि भारतीयों ने राजनैतिक आंदोलन का पहला सबक एंग्लों इंडियन्स से सीखा।

iv यह सही है कि राष्ट्रीय सम्मेलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का पूर्वगामी था।

3 इल्बर्ट बिल विवाद से आप क्या समझते हैं? नीचे दी गई जगह में लिखें ।

....

....

....

....

....

....

....

9.5 शिक्षित भारतीयों की भूमिका

स्वाभाविक रूप से यहाँ एक प्रश्न उठता है कि इस अवधि में समाज का कौन सा वर्ग राजनैतिक क्रियाकलापों में अग्रणी की भूमिका निभा रहा था। अब हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे।

इतिहासकारों के मतानुसार राजनैतिक क्रियाकलापों के आयोजन में "शिक्षित मध्य वर्ग" शिक्षित अभिजात्य अंग्रेज या बुद्धिजीवी वर्ग और व्यावसायिक वर्ग अग्रणी थे। भारतीयों के इस वर्ग की कुछ विशेषताओं का उल्लेख आवश्यक है जिन्होंने कि अंग्रेजी का ज्ञान हासिल किया था तथा ब्रिटिश शासन के मध्य बड़े हुए थे और जिन लोगों ने पेशे के रूप में कानून, शिक्षा तथा पत्रकारिता को अपनाया था अथवा सरकारी नौकरियाँ प्राप्त की थी। इन लोगों ने मूलतः बंबई तथा मद्रास प्रेसीडेंसी शहरों में अपनी शुरूआत की थी पर बाद में देश के हर हिस्से में फैल गए थे।

राष्ट्रीय चेतना तथा अतीत के गौरव से प्रेरित होकर मध्य वर्ग ने राजनैतिक अधिकारों के लिए संवैधानिक आंदोलन शुरू कर दिया। इसकी गति इतनी धीमी थी कि शुरू की अवधि में इस पर ध्यान ही नहीं गया। इसकी सामाजिक तथा आर्थिक जड़ें उद्योग अथवा व्यापार में निहित नहीं थी बल्कि इस वर्ग की जड़ें खेती, सरकारी सेवा अथवा व्यवसायों में थीं। इस क्षेत्र के लोग अपने को मध्य वर्ग कहलाने में गर्व महसूस करते थे जो कि जमींदारों के नीचे तथा मजदूरों के ऊपर थे। ये लोग उसी तरह की भूमिका निभाने का इंतजार कर रहे थे जैसी भूमिका पश्चिम के मध्य वर्ग ने निभायी थी अर्थात् पुनर्जागरण धर्म सुधार राजनैतिक संस्थाओं को औद्योगीकरण तथा उद्योगीकरण के जरिए सामंतवादी समाज से आधुनिक समाज तक के परिवर्तन का प्रतिनिधित्व।

मध्य वर्ग के सदस्य समाज के उस वर्ग से आते थे जो गरीब नहीं कहे जा सकते थे और सामान्यतः उच्च जाति के थे। हालाँकि, यह उल्लेखनीय है कि उच्च जाति के सभी लोग समाज में आर्थिक रूप से संपन्न नहीं थे। उदाहरण के लिए, बंगाल तथा भारत के कई अन्य क्षेत्रों के संपन्न परिवारों में ब्राह्मण जाति के रसोईये रखने की प्रथा थी। इसी प्रकार बंबई में भी, 1864 में जमा किए आँकड़ों से पता चलता है कि करीब 10,000 भीख मांगने वाले या तो चितपावन ब्राह्मण थे अथवा सारस्वत ब्राह्मण।

समाज के इस वर्ग को इस आधार पर सर्वोच्च कहा जा सकता है कि समाज का यह एक चुना हुआ अथवा एक विशिष्ट भाग था। परन्तु इस वर्ग की विचारधारा अपनी सुविधाओं की रक्षा सामाजिक स्तर के आधार पर नहीं करती थी। उनकी सबसे बड़ी धरोहर अंग्रेजी शिक्षा थी। अंग्रेजी शिक्षा को उन्होंने अपने तक ही सीमित नहीं रखा परन्तु बहुत से शिक्षित भारतीयों ने इस तरह की शिक्षा को फैलाने में अपने आप को समर्पित भी किया। बाद में उन्होंने बड़ी दिलचस्पी से अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा को लागू करने की माँग भी की। इसी प्रकार उन्होंने बिना संकोच के ऐसे सामाजिक सुधारों की माँग की जिनका कि उनकी सुविधाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता था।

भारतीय संदर्भ में "शिक्षित मध्य वर्ग" उन अवधि में उस समूहों को कहा जाता था जिन्होंने पश्चिमी शिक्षा पायी थी और जो किसी प्रकार के क्षेत्रीय अथवा राष्ट्रीय नेतृत्व देने की शुरूआत कर रहे थे। इन समूहों की सामाजिक रचना तथा दृष्टिकोण उन राजकुमारों, प्रधानों तथा जमींदारों से काफी भिन्न था जिन्होंने कि पहले अंग्रेजी शासन का विरोध किया था। 19वी सदी में इस वर्ग ने धार्मिक तथा सामाजिक सुधारों द्वारा देशभक्ति के गीतों, नाटकों तथा साहित्य के लेखन द्वारा ब्रिटिश शासन की आर्थिक आलोचना द्वारा तथा राजनैतिक संगठनों की स्थापना के द्वारा भारतीय जीवन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

वाइसराय लॉर्ड डफरिन ने एक बार अपनी टिप्पणी में यह कहा कि यह एक "सूक्ष्मदर्शी अल्पसंख्यक संस्था है।" इस टिप्पणी को विभिन्न इतिहासकारों ने समय-समय पर उद्धरित

किया है। इसमें कोई शक नहीं कि यह अल्पसंख्य था। परंतु यह ऐसा अल्पसंख्य था जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी जैसा कि डफरिन खुद भी जानते थे। यह एक ऐसा अल्पसंख्यक था जिसका कि आदर्श सामान्य था और जो कि एक ही तरह की बोली बोलते थे और जिनका दृष्टिकोण अखिल भारतीय स्तर का था। हमें यह भी याद करना चाहिए कि इतिहास में देश के स्वरूप निर्धारण में सक्रिय अल्पसंख्य वर्ग की ही भूमिका अहम रही है। यहाँ एक दूसरी कहावत की चर्चा की जा सकती है जिसने कि कुछ हद तक लोकप्रियता हासिल की थी। ब्रिटिश अफसरों का कहना था कि कांग्रेस आम जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती थी और जबकि अंग्रेज भारतीय जनता के हितों की देखभाल करते थे और उनके माँ-बाप के समान थे। इस कहावत को विकसित किया गया था क्योंकि यह ब्रिटिश राज्य के स्थायीकरण से संबंधित साम्राज्यिक हितों में योगदान देती थी। कुछ हद तक सभी देशों के शिक्षित लोग आम जनता से अलग-थलग होते हैं। भारत में इस अलगाव को आधुनिक शिक्षा के विदेशी माध्यम ने और भी अधिक कर दिया। लेकिन अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त कर लेने का यह मतलब नहीं था कि लोग अपनी भाषा जानना छोड़ चुके थे। महत्वपूर्ण बात यह है कि एक वर्ग के रूप में शिक्षित भारतीयों ने कभी भी अपने आप को सरकार के हाथों नहीं बेचा।

9.6 कांग्रेस की स्थापना

इस खंड में हम कांग्रेस की स्थापना से संबंधित कुछ मुद्दों की चर्चा करेंगे जैसे कि इसके प्रारंभिक कार्यक्षेत्र और गतिविधियाँ, पारित प्रस्ताव और विभिन्न वर्गों की सदस्यता इत्यादि।

9.6.1 पहली बैठक

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली बैठक के आयोजन का श्रेय ए.ओ.ह्यूम को जाता है। वे एक सेवानिवृत सरकारी अधिकारी थे जिन्होंने सेवानिवृति के बाद भारत में ही रहने का फैसला किया था। उनका लार्ड रिपन से बहुत ही अच्छा संबंध था और वह उनके इन विचारों से सहमत थे कि शिक्षित भारतीयों के उदय को राजनैतिक सच के रूप में स्वीकार करना चाहिए और समयानुसार ऐसा कदम उठाना चाहिए जिससे कि इस वर्ग की माँगों के लिए एक न्यायसंगत निकास की व्यवस्था हो और इस बात का भी प्रयास होना चाहिए कि उनकी महत्वाकांक्षाऐं पूरी हो सकें। उन्होंने कठिन परिश्रम करके अपने सारे संपर्कों को संघटित किया। दिसंबर 1884 के शुरू में वे रिपन को विदा करने बंबई पहुँचे। वे वहाँ करीब तीन महीने ठहरे और इस अवधि में उन्होंने प्रेसीडेंसी के प्रभावशाली नेताओं से शिक्षित भारतीयों के द्वारा उठाये जाने वाले राजनैतिक कार्यक्रमों के बारे में विचार-विमर्श किया। मार्च 1885 में यह तय किया गया कि इंडियन नेशनल यूनियन (शुरू में यही नाम अपनाया गया) का एक सम्मेलन क्रिसमस सप्ताह के दौरान पूना में आयोजित किया जायेगा। शुरू में ह्यूम और उनके सहयोगियों ने कलकत्ता में सम्मेलन बुलाने पर विचार किया। लेकिन बाद में उन लोगों ने पूना में ही आयोजन करने का निश्चय किया क्योंकि यह जगह देश के केन्द्र में थी और पूना सार्वजनिक सभा की कार्यपालिका समिति ने सम्मेलन की सारी व्यवस्था और आवश्यक कोष के इंतजाम करने की जिम्मेवारी ले ली थी।

हालाँकि दुर्भाग्य ने पूना को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पहले अधिवेशन के आतिथ्य के अवसर से वंचित कर दिया। पूना में हैजा फैल जाने से स्थान को बंबई ले जाया गया। पहली सभा का आयोजन सोमवार, 28 दिसंबर 1885 को गोकलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय, बंबई में किया गया। इसमें करीब 100 लोगों ने भाग लिया जिसमें से 72 लोगों को सदस्यों की मान्यता दी गयी। कांग्रेस अध्यक्ष बनने का पहला गौरव बंगाल के डब्लू.सी. बनर्जी को मिला। वे पहले चार भारतीय बैरिस्टरों में से एक थे और उन दिनों

के अग्रणी कानूनविद् भी थे। उनके चुनाव से एक स्वस्थ मिसाल की स्थापना हुई कि अध्यक्ष का चुनाव सम्मेलन के स्थान वाले प्रांत के बाहर से होना चाहिए।

9. पहली भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस-1885

9.6.2 अध्यक्षीय भाषण

पहले कांग्रेस अध्यक्ष का अध्यक्षीय भाषण कांग्रेस के चरित्र, उद्देश्यों और कार्यक्षेत्र की ओर स्पष्टतः केंद्रित था। अध्यक्षीय भाषण ने कांग्रेस के प्रति पैदा होने वाली गलत धारणाओं को भी दूर करने की कोशिश की।

अध्यक्ष ने कांग्रेस के उद्देश्यों को साफतौर पर परिभाषित किया। उन्होंने उद्देश्यों का निम्नलिखित ढंग से उल्लेख किया:

- देश के लोगों के बीच मित्रता तथा आपसी मेल-मिलाप को बढ़ावा देना।
- प्रजाति, धर्ममत और प्रांतों के प्रति पैदा हुए सभी विद्वेषों को दूर करना।
- राष्ट्रीय एकता की भावनाओं को संघटित करना
- शिक्षित वर्गों द्वारा तत्कालिक मुद्दों पर व्यक्त मतों को दर्ज करना और
- जनहित में उठाये जाने वाले कदमों का निर्धारण करना।

इन माँगों के अलावा अध्यक्ष ने ब्रिटिश शासन के द्वारा भारत को दिए कृपादानों का भी उल्लेख किया। उन्होंने यह आश्वासन दिया कि शिक्षित भारतीय, सरकार के प्रति पूरे निष्ठावान तथा शुभचिंतक हैं। उन्होंने इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया कि कांग्रेस के इस आयोजन का उद्देश्य सिर्फ अपने विचारों को शासनाधिकारियों के पास पहुँचाना है और इन लोगों को षड्यंत्रकारी और कृतघ्न कहना अनुचित है। उन्होंने ह्यूम के नेतृत्व को इसलिए स्वीकार किया क्योंकि भारत में ब्रिटिश समुदाय के ज्यादातर सदस्यों को शिक्षित भारतीयों पर भरोसा नहीं था। अन्त में अध्यक्ष ने सावधानीपूर्वक कांग्रेस के उद्देश्यों की चर्चा की।

इनकी मुख्य इच्छा यह थी कि सरकार के आधार को फैलाया जाना चाहिए। इस तरह की नीति न सिर्फ सरकार के लिए बल्कि लोगों के हित में भी सहायक होगी। यह इस बात को दर्शाता है कि कांग्रेस अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए सरकार में भागीदारी नहीं चाहती थी बल्कि इस संदर्भ में सारे भारतीयों के हितों के बारे में सोच रही थी। दरअसल सबसे अधिक गहराई से राष्ट्रीय एकता की आकांक्षा को ही व्यक्त किया गया था।

ब्रिटिश शासन के न्यायपूर्ण रवैये में कांग्रेस के नेताओं को असीम विश्वास था। वे अंग्रेजों को बाहर निकालने के संदर्भ में नहीं सोचते थे। वे सिर्फ यही चाहते थे कि भारतीय सरकार द्वारा अपनायी नीतियों का उद्देश्य भारतीय जनता की भलाई होनी चाहिए और यही उनके हितों की तरक्की का मतलब था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे सरकार के संचालन में बड़ी भागीदारी चाहते थे। ऐसा प्रतिनिधित्व संस्थाओं के विकास और भारतीयों को उच्च पदों पर नियुक्ति देकर किया जा सकता था।

9.6.3 उपस्थिति

इस बात का जिक्र ही किया जाता है कि कांग्रेस में वकीलों का बोलबाला था। उदाहरण के लिए इतिहासकार अनिल सील का मानना है कि कांग्रेस के पहले अधिवेशन में आधे से ज्यादा (72 में 39) लोग वकील थे और आने वाले दशकों में भी एक तिहाई से ज्यादा प्रतिनिधि वकालत के पेशे से ही थे। पुराने रईस वर्ग के लोग जैसे राजाओं, महाराजाओं, बड़े जमीदारों और धनी व्यापारियों की अनुपस्थिति सुस्पष्ट थी। कृषक और मजदूर भी उसकी ओर आकर्षित नहीं हुए। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि वकीलों का प्रभुत्व था। लेकिन यह लगभग सभी राजनैतिक संगठनों और विधायिकाओं के बारे में कहा जा सकता है। भारत में शिक्षित भारतीयों के सामने भविष्य निर्माण के बहुत कम अवसर उपलब्ध होने के कारण ज्यादातर लोगों ने कानूनी पेशे को ही अपना लिया। पुराने कुलीन वर्ग कांग्रेस की सभा में भाग नहीं लेते थे क्योंकि उनमें नए उदार और राष्ट्रीय विचारों के कारण असुरक्षा की भावना पैदा हो गई थी। हालाँकि भारत के गरीबों की चर्चा काफी समय से कई नेताओं खासकर दादाभाई नौरोजी द्वारा की गयी थी परंतु आम जनता को आंदोलन के इस दौर में शामिल करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। जब कांग्रेस ने लोगों के हालात पर चर्चा शुरू की तब यह निश्चय किया गया कि पहला कदम प्रतिनिधि संस्थाओं के अधिकार की तरफ उठाना चाहिए। कांग्रेस द्वारा अपनाए तरीकों जैसे निवेदन पत्र देना, अपील करना तथा लेख चर्चा को देखा जाए तो ऐसा स्वाभाविक ही था।

9.6.4 कार्यवाही और प्रस्ताव

कांग्रेस की कार्यवाही काफी सुचारू और सफल ढंग से संचालित की जाती थी। प्रस्तावों को बडी कड़ी संसदीय प्रक्रिया के तहत विचार-विमर्श के बाद पारित किया जाता था। प्रत्येक प्रस्ताव को एक प्रांत के सदस्य द्वारा रखा जाता था और तब किसी दूसरे प्रांत के सदस्य द्वारा उसका अनुमोदन होता था और अन्य प्रांतों के सदस्य उसका समर्थन किया करते थे। उनके द्वारा दिए भाषण काफी संयमित होते थे तथा ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादारी प्रदर्शित करते थे। इतिहासकार ब्रिटन मार्टिन (न्यू इंडिया : 1885, दिल्ली 1970) ने टिप्पणी की है कि कांग्रेस का पहला अधिवेशन एक नितांत व्यावसायिक मामला था जो कि उसी तरह के इंगलैंड और अमेरिका में होने वाले राजनैतिक संगठनों के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकता था।

पहले कांग्रेस अधिवेशन ने नौ प्रस्ताव पास किए:

- पहले प्रस्ताव में भारतीय मसलों की छानबीन के लिए रायल कमीशन, जिसमें की भारतीयों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो, की नियुक्ति की माँग की गयी।
- दूसरे प्रस्ताव में सेक्रेट्री ऑफ स्टेट की भारतीय परिषद् की समाप्ति कीं माँग की गयी। । कांग्रेस यह चाहती थी कि सेक्रेट्री ऑफ स्टेट सीधे तौर पर ब्रिटिश संसद के प्रति जिम्मेवार हो। यह माँग इस भावना पर आधारित थी कि ब्रिटिश जनता न्यायी और निष्पक्ष है और अगर उसे सही तरीके से सूचना दी जाये तो वे अपने सही रास्ते से भ्रमित नहीं होंगे।
- एक अन्य प्रस्ताव में विदेश नीति से संबंधित प्रस्ताव में ऊपरी बर्मा के विलय की भर्त्सना की गयी।

- अन्य प्रस्ताव संविधान और केंद्रीय तथा प्रांतीय विधायी परिषदों की कार्यवाही को उदारवादी बनाने, ब्रिटेन और भारत में एक ही साथ सिविल सेवा परीक्षा आयोजित करने तथा सेना परीक्षा आयोजित करने तथा सेना के खर्चे को कम करने से संबंधित थे।

अधिवेश समाप्ति से पहले कांग्रेस ने दो और निर्णय लिए:—

i) पहला यह था कि कांग्रेस द्वारा पारित प्रस्तावों को देश के अन्य राजनैतिक संगठनों द्वारा सहमति का प्रयास होना चाहिये।

ii) दूसरा निर्णय अग अधिवेशन 28 दिसंबर 1886 के कलकत्ता में आयोजित करने से संबंधित था।

iii) यह निर्णय काफी महत्वपूर्ण हैं। ये इस बात को प्रदर्शित करते हैं कि नेताओं ने कांग्रेस को एक पृथक घटना के रूप में नहीं परंतु एक आंदोलन की शुरूआत के रूप में देखा।

ऊपर की परिचर्चा में आपने देखा होगा कि सामाजिक सुधारों से संबंधित प्रश्न तक पूछे नहीं गए थे। कुछ सदस्यों ने इस प्रश्न पर विचार करने का दबाव भी डाला। लेकिन काफी बुनियादी मतभेदों के कारण ऐसा नहीं किया जा सका। हालाँकि कुछ सदस्यों ने कांग्रेस अधिवेशन की समाप्ति के तुरंत बाद उसी स्थान पर हुई जनसभा का फायदा उठाते हुए बाल-विवाह और जबरन वैधता जैसे कुछ मुद्दों पर विचार किया।

बोध प्रश्न 3

1 शिक्षित भारतीय समाज के किस वर्ग से आते थे? पंक्तियों में लिखें

....

....

....

....

....

2 **प्रथम अध्यक्ष द्वारा परिभाषित कांग्रेस के लक्ष्य और विषयों की एक सूची बनाएँ।**

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3 **प्रथम कांग्रेस द्वारा पारित चार प्रस्तावों का जिक्र करें**

....

....

....

....

....

....

....

....

....

9.7 कांग्रेस की उत्पत्ति से संबंधित विवाद

चूँकि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत के इतिहास में अहम भूमिका निभायी है इसलिए यह स्वाभाविक था कि तत्कालीन और बाद के इतिहासकार इसकी स्थापना के कारण पर अपने-अपने विचार व्यक्त करें। सच तो यह है कि कांग्रेस की स्थापना के समय से ही इस प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। कई विद्वानों ने इस बात का पता लगाने की कोशिश की है कि यह किसी एक व्यक्ति अथवा कई लोगों अथवा कुछ विशेष परिस्थितियों का प्रतिफल था। लेकिन सारे प्राप्त प्रमाण परस्पर विरोधी हैं। कांग्रेस की शुरूआत के 100 वर्ष बाद भी इतिहासकारों के बीच इस मुद्दे पर चर्चा जारी है। हम देखेंगे कि किस प्रकार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की व्याख्या निम्नलिखित वैकल्पिक सिद्धांतों द्वारा की जा सकती है "सरकारी षड्यन्त्र सिद्धांत, विशिष्ट वर्ग की प्रतिद्वन्द्विता तथा महत्व, अखिल भारतीय संस्था की आवश्यकता"

9.7.1 सरकारी षड्यंत्र सिद्धांत

अगर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना किसी भारतीय द्वारा की गयी होती तो इसे एक स्वाभाविक तथा तार्किक रूप में स्वीकार कर लिया गया होता। परंतु, सच तो यह है कि अखिल भारतीय राजनैतिक संगठन की योजना को मूर्त और सुनिश्चित आकार एक अंग्रेज ए.ओ.ह्यूम नाम के व्यक्ति ने दिया जिसने कई विवादों को जन्म दिया है। ऐसा क्यों हुआ कि कांग्रेस की शुरूआत एक अंग्रेज द्वारा हुई? इसके अलावा, ह्यूम मात्र एक अंग्रेज ही नहीं बल्कि भारतीय सिविल सेवा में एक प्रशासनिक अधिकारी भी था। यह कहा जाता है कि नौकरी के उपरांत उसे कई ऐसे महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में पता चला जिनसे यह प्रमाणित होता था कि आम जनता के दुःखों और बुद्धिजीवी वर्ग के अलगाव ने काफी हद तक आक्रोश एकत्रित कर दिया था जो कि ब्रिटिश शासन के लिए खतरा पैदा कर सकता था। 1857 के महान् विद्रोह की यादें अभी भी ताजा थीं। इसके अलावा, ह्यूम ने खुद ही कहा था कि उसका उद्देश्य भारतीय आक्रोश को रोकने के लिए एक सुरक्षा कपाट (सेफ्टी वाल्व) का प्रबंध करना था जिससे अंग्रेजों के विरूद्ध किसी बड़े विद्रोह को रोका जा सके। बनर्जी के इस वक्तव्य ने कि ह्यूम डफरिन की सीधी सलाह से काम कर रहे थे और भी मजबूती प्रदान की। इन दो तथ्यों को एक साथ अध्ययन करने से यह तथ्य पैदा हुआ कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म एक सुनियोजित ब्रिटिश चाल से हुआ जिसका उद्देश्य शिक्षित भारतीयों के बीच पैदा हुए असंतोष को शांतिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से निकास मिल सके और इस तरह राज के खतरे को टाला जा सके।

लेकिन इतिहासकारों ने अब इस विचार को स्वीकार करने से इंकार कर दिया है और इसके लिए कई कारण प्रस्तुत किए गए हैं। सरकारी निर्णयों में ह्यूम के प्रभाव को काफी बढ़ा चढ़ा कर रखा गया है। गवर्नर जनरल लार्ड डफरिन को लिखे गुप्त पत्रों से जो अब उपलब्ध है यह प्रकट होता है कि ब्रिटिश पदाधिकारियों के द्वारा ह्यूम के विचारों को बहुत गंभीरता से नहीं लिया जाता था। इसके अतिरिक्त ह्यूम का उद्देश्य शिक्षित भारतीयों के असंतोष के निकास के लिए "सुरक्षा कपाट" (सेफ्टी वाल्व) बनाने मात्र से कहीं अधिक तथा वास्तविक और निष्कपट था। उन्हें भारतीयों के प्रति एक मानवीय सहानुभूति भी थी और वह कई वर्षों तक कांग्रेस को एक मजबूत और सक्रिय संगठन बनाने के अथक प्रयास में लगे रहे। 1885 से 1906 तक वह कांग्रेस के महासचिव रहे और इसकी गतिविधियों के दिशा निर्देशन, निश्चित आकार, सामंजस्यता तथा अभिलेखन में योगदान देते रहे। ह्यूम के लिए कहीं भी भारतीय जनता के पुनरुद्धार के लिये कार्य करने में तथा प्रबुद्ध साम्राज्यवादी विचारों में कोई असंगति नहीं थी और एक ही समय में वह यह विश्वास करते थे कि प्रबुद्ध दूरस्थ साम्राज्यवाद भारतीय जनता के सामाजिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण के लिए लाभदायी हो सकता था। अंततः अन्य घटनाओं के कारण जिनकी चर्चा की जा चुकी है, एक अखिल भारतीय संगठन की स्थापना की आवश्यकता महसूस की गयी और इस दिशा में कुछ प्रयास किए भी जा चुके थे। ह्यूम किसी भी मायने में सामाजिक और राजनैतिक वातावरण में परिवर्तन लाने के लिए जिम्मेवार नहीं ठहराये जा सकते थे जो कि राष्ट्रीय संगठन की नींव और टिके रहने को वास्तविक रूप में यथार्थ बना सके।

कांग्रेस के निर्माण को किसी एक व्यक्ति का ही प्रयास नहीं माना जा सकता है बल्कि इसके कई अन्य कारण थे जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है। ह्यूम सिर्फ एक व्यापक और सचेतन मध्यम वर्ग की आकांक्षाओं की पूर्ति के माध्यम थे जो देश के प्रशासन के संचालन में ब्रिटिश अधिकारियों के साथ हिस्सेदारी निभाने के लिए उत्सुक था।

इस संदर्भ में एक प्रश्न उठता है कि शिक्षित भारतीयों ने ह्यूम का नेतृत्व क्यों स्वीकार किया। यह प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि उनमें से कुछ लोग अपने क्षेत्र में करीब एक दशक से काफी सक्रिय थे। एक कारण यह भी हो सकता है कि अंग्रेज होने के नाते वे क्षेत्रीय पक्षपात से स्वतंत्र थे। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि ज्यादा महत्वपूर्ण नेता सावधानीपूर्वक आगे बढ़ना चाहते थे ताकि उन्हें आधिकारिक रोष का सामना न करना पड़े।

भूतपूर्व ब्रिटिश सिविल अधिकारी के कारण आधिकारिक क्षेत्रों में विद्वेष पैदा होने की कम संभावना थी। भारतीय नेता अच्छी तरह जानते थे कि तत्कालीन परिस्थितियों में क्या संभव था। ऐसी स्थिति में वे अपने विचारों को शासकों के दिमाग में बिना कोई संदेह पैदा किए संघटित और व्यक्त करना चाहते थे। अपने भाषण में अध्यक्ष ने इन बातों का साफ जिक्र किया। उन्होंने कहा "कई अवसरों पर कई सज्जनों ने जो वक्तव्य दिए हैं उन्हें सोच विचार कर कांग्रेस की भर्त्सना करनी चाहिए थी न कि सिर्फ ये समझ लेना चाहिए कि यह षड्यंत्रकारियों और गद्दारों का घोंसला है।" अगर इसका संस्थापक एक अंग्रेज था तो द्वेष होने की संभावना कम थी। इसी संदर्भ में महान नेता जी.के. गोखले का वक्तव्य अक्सर उद्धृत किया जाता है:

"कोई भी भारतीय, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की शुरूआत नहीं कर सकता था...अगर कांग्रेस का संस्थापक एक महान अंग्रेज और विशिष्ट पूर्व अधिकारी नहीं होता तो उन दिनों जिस नज़र से राजनैतिक आंदोलनों को देखा जाता था, अधिकारी किसी न किसी आधार पर आंदोलन को दबा देते।"

9.7.2 भारतीय विशिष्ट वर्ग की प्रतिद्वन्द्विता और महत्वकांक्षाएँ

पिछले दो दशकों में कई इतिहासकारों खासकर कैम्ब्रिज के विद्वानों ने कहा है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कुछ मायनों में राष्ट्रीय नहीं थी बल्कि यह स्वार्थी व्यक्तियों द्वारा चलाया गया आंदोलन था और यह उनके आर्थिक हितों और संकीर्ण विवादों की पूर्ति के लिए साधन के रूप में कार्य करता था। (इन विचारों को व्यक्त करने वाले सबसे ज्यादा, प्रभावशाली इतिहासकार अनिल सील हैं) लेकिन इस विचार को भारत में चुनौती दी गई है। यह बात सच है कि अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हर कोई शक्ति पाना चाहता है। लेकिन कई अन्य व्यापक कारणों को नकारा नहीं जा सकता। इस तरह की विवेचना रंग-भेद से ठेस लगी भावनाओं, देशवासियों की उपलब्धियों पर गौरवान्वित होने की भावना और इस बात का बोध होना कि उनके देशवासियों के हितों की पूर्ति भारत और ब्रिटेन के संबंधों के पुनर्गठन से हो सकेगी की उपेक्षा करती है। इस तरह की भावना विकसित हो रही थी कि भारतीय समान संस्कृति और मौलिक आर्थिक और राजनैतिक हित के साझेदार हैं। विदेशी शासन ने लोगों की समान आकांक्षाओं और कष्टों को और बढ़ा दिया था।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक और कई अन्य संगठन राष्ट्रवादी दृष्टि के आदर्शवाद से प्रेरित थे जिसके कारण भारतीय राष्ट्र के हित में स्वयं, परिवार, जाति तथा समुदाय के हितों को आधीनीकरण कर दिया गया। वे राष्ट्रीय दृष्टि को वास्तविकता में बदलने के प्रयास में नए रास्तों की खोज में लगे रहे। कांग्रेसी नेताओं की पहली पीढ़ी इस बात से हमेशा सचेत रही कि वे ब्रिटिश सरकार के द्वारा शासित किए जाते हैं जिसने कि भारत में कई उदार मूल्यों को लाया और उनसे पूरी तरह संबंध विच्छेद कर लेना देशवासियों के हित में नहीं हो सकता है। दूसरी तरफ वे ऐसी संरचना बनाने का रास्ता ढूंढ रहे थे जो कि उनके देशवासियों के हितों की पूर्ति कर सके।

9.7.3 अखिल भारतीय संस्था की आवश्यकता

व्यापक संदर्भ में देखने पर प्रतीत होता है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना विदेशी शासन की लंबी अवधि के परिणामस्वरूप पैदा हुई विद्यमान राजनैतिक और सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों की ही प्रतिक्रिया थी। जैसा कि हमने देखा है कि 1880 दशक के दौरान एक राष्ट्रीय संगठन बनाने का विचार काफी हद तक रंगरूप ले चुका था। दरअसल 1885 के अंतिम दस दिनों में करीब पाँच सम्मेलनों का आयोजन देश के विभिन्न भागों में किया गया था। मद्रास महाजन सभा ने अपना द्वितीय वार्षिक सम्मेलन 22 से 24 दिसंबर तक आयोजित किया। इसे ऐसे वक्त किया गया ताकि सभा के सदस्य पूना में होने वाली कांग्रेस में सम्मिलित हो सकें। इंडियन एसोसिएशन द्वारा द्वितीय भारतीय राष्ट्रीय सम्मेलन कलकत्ता में आयोजित किया गया। 1885 के दिसंबर के शुरू में जब पूना में सम्मेलन बुलाने की योजना की घोषणा की गयी तो सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को अपना सम्मेलन स्थगित करने की राय दी गयी। लेकिन उन्होंने इस स्थिति में ऐसा करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। 1886 में इसका विलय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में हो गया। इसी अवधि में यूरोपियों द्वारा जबलपुर में तथा प्रयाग सेन्ट्रल हिन्दू समाज द्वारा इलाहाबाद में दो भिन्न सम्मेलन आयोजित किए गए। राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षित वर्ग के आविर्भाव, उनके द्वारा व्यक्त विचारों और संगठनात्मक विकासों के द्वारा राष्ट्रीय संस्था का निर्माण लगभग अवश्यम्भावी हो चुका था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस शिक्षित वर्ग के राजनैतिक उद्देश्यों के लिए साथ-साथ काम करने की आवश्यकता की आवश्यकता के परिणाम का प्रतिनिधित्व करती थी। यह राजनैतिक विचारों के विकास की एक लंबी प्रक्रिया तथा 1830 के दशक से शुरू हुए संगठन की प्रक्रिया का ही परिणाम था।

यह ध्यान देने वाली दिलचस्प बात है कि तत्कालीन भाग लेने वाले और पर्यवेक्षकों ने दो बातों के प्रति अपनी जागरूकता दिखायी। एक बात यह थी कि वे लोग इतिहास बना रहे थे और दूसरी कि कांग्रेस राष्ट्रत्व की भावना के विकास का सूचक बन गयी थी। इतिहास के निर्णय ने उनके विचारों की पुष्टि कर दी है।

बोध प्रश्न 4

1 सेफ्टी वाल्व सिद्धांत से आप क्या समझते हैं? करीब 100 शब्दों में लिखो

....
....
....
....
....
....
....
....
....

2 कांग्रेस की उत्पत्ति से संबंधित ऊपर दिये गए सिद्धांतों में आप कौन सा सिद्धांत स्वीकार्य पाते हैं और क्यों?

....
....
....
....
....
....

....

....

....

....

9.8 सारांश

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना में एक नए युग की शुरूआत हुई जिसने कि मात्र 60 वर्षों की अवधि में राष्ट्र की स्वतंत्रता, संप्रभुता तथा आत्म-निर्भरता के सपनों को पूरा होते हुए देखा। यह भारतीय लोगों के बीच बन रही एकता की भावना का स्पष्ट सूचक था। यह सच है कि शुरू में कांग्रेस एक ठ थत राजनैतिक संगठन नहीं था। उसकी न तो कोई नियमित सदस्यता थी और न ही कोई केन्द्रीय कार्यालय। इसके विचार भी काफी नर्म तथा संतुलित थे। लेकिन किसी ने सही ही कहा है कि महान संस्थाओं की हमेशा ही छोटी शुरूआत होती है।

9.9 शब्दावली

मुफस्सिल : जिले का एक सबडिविजन

प्रेसीडेंसी शहर : शुरू के ब्रिटिश अधिकृत केन्द्र जैसे कलकत्ता मद्रास बम्बई

पुनर्जागरण : 14वीं और 16वीं शताब्दियों के बीच पश्चिमी यूरा यूरोप में होने वाली सांस्कृतिक जागरूकता और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया

धर्म सुधार : आधुनिकीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम पश्चिमी यूरोप में 15वीं शताब्दी में पुनर्जागरण के बाद

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1 खंड 9.2 पढ़ो
2 i) c, ii) a, iii) b
3 i) × ii) ✓ iii) ✓ iv) ×

बोध प्रश्न 2

1 उपभाग 9.4.1 देखो
2 i) ✓ ii) × iii) × iv) ✓
3 उपभाग 9.4.2 देखो

बोध प्रश्न 3

1 अपना उत्तर भाग 9.5 से लिखो
2 उपभाग 9.6.2 देखो
3 उपभाग 9.6.4 देखो

बोध प्रश्न 4

1 उपभाग 9.7.1 देखो
2 भाग 9.7 को पूरा पढ़ो और अपना उत्तर लिखो।